रविवारीय

भारत 2026 में ब्रिक्स की अध्यक्षता ऐसे समय कर रहा है जब कृषि व्यापार की चर्चा केवल शुल्क और बाजार पहुंच तक सीमित नहीं रह गई है. जलवायु संकट, खाद्य कीमतों में उतार-चढ़ाव, उर्वरकों की आपूर्ति में रुकावट, सतत उत्पादन से जुड़े मानक, उत्पाद के स्रोत और गुणवत्ता की डिजिटल जानकारी तथा संकट के समय बाजारों को खुला रखने की जरूरत अब कृषि व्यापार के अहम मुद्दे बन चुके हैं.

ब्रिक्स और कृषि व्यापार की नई दिशा

एम.एल. जाट

स्मिता सिरोही

कृषि क्यों महत्वपूर्ण है- ब्रिक्स के विस्तार के बाद यह समूह अब दुनिया की लगभग आधी आबादी, वैश्विक जीडीपी के करीब 40 प्रतिशत और वैश्विक व्यापार के लगभग एक चौथाई हिस्से का प्रतिनिधित्व करता है. संयुक्त राष्ट्र की व्यापार एवं विकास संस्था, अंकटाड, के हालिया आकलन के अनुसार, ब्रिक्स देशों के बीच वस्तुओं का व्यापार 2003 के बाद तेरह गुना से अधिक बढ़ा है और 2024 में 1.17 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर तक पहुंच गया. कृषि इस बड़े व्यापारिक परिदृश्य का केवल एक हिस्सा हो सकती है, लेकिन राजनीतिक और सामाजिक दृष्टि से यह सबसे संवेदनशील क्षेत्रों में है. जब खाद्य पदार्थ महंगे होते हैं, उर्वरकों की आपूर्ति रुकती है या समुद्री मार्गों में अनिश्चितता आती है, तो इसका सीधा असर किसानों, उपभोक्ताओं और सरकारों पर पड़ता है. इसलिए कृषि भारत की ब्रिक्स अध्यक्षता के सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों में से एक है.

ब्रिक्स देशों के बीच कृषि के क्षेत्र में कई तरह की पूरकताएं हैं. ब्राजील सोयाबीन, मांस और चीनी का बड़ा निर्यातक है. रूस अनाज और उर्वरकों में महत्वपूर्ण भूमिका रखता है. भारत चावल, समुद्री उत्पाद, मसाले, भैंस के मांस और छोटे किसानों से जुड़ी कई कृषि वस्तुओं में मजबूत स्थिति रखता है. चीन खाद्य पदार्थों का बड़ा आयातक और प्रसंस्करण करने वाला देश है. दक्षिण अफ्रीका इस समूह को अफ्रीका के महत्वपूर्ण कृषि-खाद्य बाजारों से जोड़ता है. नए सदस्य भी इसमें नए आयाम जोड़ते हैं. संयुक्त अरब अमीरात और सऊदी अरब लॉजिस्टिक्स, वित्त और खाद्य सुरक्षा निवेश के लिहाज से महत्वपूर्ण हैं. मिस्र और इथियोपिया अफ्रीका की खाद्य प्रणाली से जुड़ी चिंताओं को सामने लाते हैं, जबकि इंडोनेशिया पाम ऑयल, मत्स्य क्षेत्र और उष्णकटिबंधीय कृषि की ताकत जोड़ता है.

आपसी ताकतों को ठोस व्यवस्था में बदलना- लेकिन केवल बड़े पैमाने और आपसी ताकतों के मेल से अपने-आप मजबूत व्यापार व्यवस्था नहीं बनती. आगामी ब्रिक्स कृषि मंत्रियों की बैठक भारत को यह अवसर देती है कि वह सहयोग को कुछ ठोस दिशाओं में आगे बढ़ाए. इनमें भरोसेमंद व्यापार व्यवस्था, बीज, उर्वरक और अन्य उत्पादन सामग्री की मजबूत आपूर्ति श्रृंखला, बेहतर बाजार जानकारी और ऐसी मूल्य श्रृंखलाएं शामिल हैं जिनमें छोटे किसानों, महिलाओं और युवाओं की सक्रिय भागीदारी हो.

भरोसेमंद व्यापार व्यवस्था को शुरुआती प्राथमिकता मिलनी चाहिए. कृषि व्यापार में केवल माल भेजना पर्याप्त नहीं है; यह भी उतना ही जरूरी है कि उत्पाद की गुणवत्ता, सुरक्षा और स्रोत पर भरोसा हो. कृषि व्यापार सुविधा पर 2024 के ब्रिक्स सिद्धांत पहले ही खाद्य सुरक्षा, पशु-पौध स्वास्थ्य और तकनीकी मानकों से जुड़े सहयोग, एक-दूसरे के मानकों को स्वीकार करने की व्यवस्था, कम व्यापार लागत और डिजिटल व्यापार सुविधा जैसे बुनियादी मुद्दों को मान्यता देते हैं. भारत इस एजेंडे को आगे बढ़ाते हुए डिजिटल प्रमाणपत्रों, उत्पाद के स्रोत और गुणवत्ता की भरोसेमंद डिजिटल जानकारी, नियामकों के बीच तेज संवाद और उत्पादकों व निर्यातकों की क्षमता निर्माण पर जोर दे सकता है.

दूसरी प्राथमिकता मजबूत आपूर्ति श्रृंखला होनी चाहिए. खाद्य व्यापार को उर्वरक, ऊर्जा, पशु आहार, बीज, ढुलाई-भंडारण और वित्त से अलग करके नहीं देखा जा सकता. भारत के लिए यह कोई दूर की चिंता नहीं है. उसके उर्वरक और ऊर्जा आयात का आधे से अधिक हिस्सा ब्रिक्स देशों से आता है. इसलिए उत्पादन सामग्री की सुरक्षा सीधे कृषि की मजबूती से जुड़ी हुई है. पश्चिम एशिया के हालिया संकटों ने दिखाया है कि खाद्य पदार्थों के बाजार तक पहुंचने से बहुत पहले ही उत्पादन प्रभावित हो सकता है. इसलिए ब्रिक्स सहयोग में उर्वरकों और अन्य उत्पादन सामग्री के बाजारों के लिए पूर्व चेतावनी प्रणाली, भंडार और कीमतों पर पारदर्शी जानकारी, और जरूरी कृषि सामग्री की आपूर्ति में अचानक आने वाली रुकावटों को कम करने की व्यवस्था शामिल होनी चाहिए.

तीसरी प्राथमिकता बेहतर बाजार जानकारी है. ब्रिक्स अनाज विनिमय का विचार इस बात की जरूरत को दिखाता है कि खाद्य बाजारों में अधिक पारदर्शिता, बेहतर मूल्य संकेत और खाद्य सुरक्षा की तैयारी होनी चाहिए. भारत इस दिशा में ब्रिक्स कृषि अनुसंधान मंच के भीतर कृषि बाजार जानकारी से जुड़ी एक व्यवस्था का प्रस्ताव रख सकता है. यह मंच पहले से ही 'ज्ञान से कार्य' की दिशा में विकसित किया जा रहा है. ऐसी व्यवस्था खाद्य भंडार, फसल की स्थिति, उर्वरक कीमतों, जहाजरानी जोखिमों, खाद्य सुरक्षा और पशु-पौध स्वास्थ्य से जुड़े अलर्ट तथा प्रमुख कृषि जिंसों के रुझानों पर नियमित जानकारी दे सकती है. इससे देश संकट गहराने से पहले ही तैयारी कर सकेंगे.

इन प्राथमिकताओं का उद्देश्य खाद्य पदार्थों से जुड़े किसी बंद गुट का निर्माण करना नहीं है. इनका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि कृषि व्यापार एक अनिश्चित दुनिया में खाद्य सुरक्षा, किसानों और उपभोक्ताओं के लिए बेहतर ढंग से काम करे. भारत इस एजेंडा को आकार देने की दृष्टि से सही स्थिति में है क्योंकि उसे खाद्य सुरक्षा के प्रबंधन, छोटे किसानों पर आधारित कृषि, डिजिटल सार्वजनिक अवसंरचना और कृषि अनुसंधान का खासा अनुभव है.

भारत की ब्रिक्स अध्यक्षता इस एजेंडे को व्यावहारिक रूप देने का समय पर मिला अवसर है. छोटे लेकिन सुविचारित कदम भी संकट के समय कृषि व्यापार को अधिक भरोसेमंद, नियमों की दृष्टि से अधिक पारदर्शी और किसानों के लिए अधिक सुलभ बना सकते हैं. यह अधिक मजबूत, भरोसेमंद और किसान-केंद्रित कृषि व्यापार व्यवस्था की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम होगा.

ये लेखकों के निजी विचार हैं

डॉ. एम.एल. जाट, आईसीएआर के महानिदेशक तथा डीएआरई के सचिव हैं

डॉ. स्मिता सिरोही, आईसीएआर के एम.एस. स्वामीनाथन चेयर की राष्ट्रीय प्रोफेसर और डीएएफ एंड डब्ल्यू की पूर्व संयुक्त सचिव हैं

व्यापार को किसान-केन्द्रित बनाना

चौथी प्राथमिकता ऐसी मूल्य श्रृंखलाएं होनी चाहिए जिनमें छोटे किसानों, महिलाओं और युवाओं की भागीदारी सुनिश्चित हो. यदि कृषि व्यापार केवल बड़ी मात्रा में अनाज, तेल, चीनी या अन्य जिंसों की खरीद-बिक्री तक सीमित रह गया, तो उससे छोटे किसानों और ग्रामीण परिवारों को सीमित लाभ ही मिलेगा. कृषि-खाद्य प्रणालियों में महिलाओं की भूमिका पर वैश्विक सम्मेलन 2026 से निकली दिल्ली घोषणा ने कृषि-खाद्य व्यवस्था में महिलाओं की भूमिका, नेतृत्व और भागीदारी को केंद्र में रखा है. भारत इस भावना को ब्रिक्स के कृषि व्यापार एजेंडे में आगे बढ़ा सकता है, ताकि छोटे किसानों, विशेषकर महिला किसानों और ग्रामीण युवाओं को केवल बाजार के लिए उत्पादन करने तक सीमित न रखा जाए, बल्कि उन्हें मूल्य श्रृंखलाओं में अधिक प्रभावी भागीदारी का अवसर मिले.

पंजाब और उत्तर प्रदेश तय करेंगे कांग्रेस और भाजपा की अगली दिशा

श्याम यादव
राजनीतिक लेखक

उत्तर प्रदेश और पंजाब में होने वाले आगामी विधानसभा चुनाव केवल दो राज्यों के चुनाव नहीं होंगे, बल्कि वे देश की दो प्रमुख राजनीतिक पार्टियों—भारतीय जनता पार्टी और कांग्रेस—की भावी राजनीतिक दिशा भी तय करेंगे. कांग्रेस के लिए ये चुनाव राजनीतिक पुनर्वास और खोई हुई जमीन वापस पाने का अवसर होंगे, तो भारतीय जनता पार्टी के लिए अपने बढ़ते प्रभाव को और मजबूत करने की परीक्षा. दोनों राज्यों में फिलहाल कांग्रेस सत्ता से बाहर है, लेकिन उसके लिए उम्मीद की सबसे बड़ी किरण भी यही दो प्रदेश हैं. दूसरी ओर भाजपा के लिए उत्तर प्रदेश अपनी राजनीतिक ताकत को बरकरार रखने और पंजाब में नए अवसर तलाशने का महत्वपूर्ण मैदान है. पंजाब और उत्तर प्रदेश की राजनीतिक परिस्थितियां भले अलग-अलग हों, लेकिन दोनों का महत्व कांग्रेस और भाजपा के लिए लगभग समान है. पंजाब में कांग्रेस अपनी पुरानी राजनीतिक ताकत को फिर से हासिल करने की कोशिश में है, जबकि उत्तर प्रदेश में उसे अपने राजनीतिक अस्तित्व को नई ऊर्जा देनी है. भाजपा की स्थिति भी दोनों राज्यों में अलग है. उत्तर प्रदेश में वह सत्ता में है और अपनी बढ़त बनाए रखना चाहती है, जबकि पंजाब में वह अपने लिए नई राजनीतिक संभावनाएं तलाश रही है. कांग्रेस इन दिनों संगठनात्मक बदलावों की चर्चा के केंद्र में है. पार्टी नेतृत्व को यह अहसास है कि केवल संसद में सीटें बढ़ा लेने से राष्ट्रीय राजनीति में स्थायी प्रभाव नहीं बनता. किसी भी राष्ट्रीय दल की वास्तविक ताकत राज्यों में खड़ी होती है और वहीं से उसकी राष्ट्रीय स्वीकार्यता का विस्तार होता है. यही वजह है कि कांग्रेस की निगाह अब उन राज्यों पर है जहां वह अपनी खोई हुई राजनीतिक जमीन वापस पाने की संभावना देख रही है.

पंजाब कांग्रेस के लिए केवल एक चुनावी राज्य नहीं, बल्कि उसकी राजनीतिक विरासत का महत्वपूर्ण हिस्सा रहा है. लंबे समय तक राज्य की राजनीति में कांग्रेस निर्णायक भूमिका निभाती रही, लेकिन पिछले कुछ वर्षों में गुटबाजी, नेतृत्व संघर्ष और बदलते राजनीतिक समीकरणों ने उसकी स्थिति को कमजोर किया है. आम आदमी पार्टी के सत्ता में आने के बाद कांग्रेस का परंपरागत जनाधार भी प्रभावित हुआ है. वहीं राज्य की राजनीति में लगातार उभरते नए समीकरण यह संकेत दे रहे हैं कि आने वाले समय में मुकाबला और अधिक जटिल हो सकता है. ऐसे में पंजाब में कांग्रेस की चुनावी संभावनाओं का आकलन उसके संगठन की स्थिति से अलग करके नहीं किया जा सकता. पार्टी के सामने केवल आम आदमी पार्टी और भाजपा से मुकाबले की चुनौती नहीं है, बल्कि अपनी राजनीतिक विश्वसनीयता को पुनः स्थापित करने की चुनौती भी है. राज्य में उसकी ताकत और कमजोरी, दोनों का केंद्र उसका संगठन ही है. उत्तर प्रदेश की कहानी अलग है. यहां कांग्रेस के सामने सत्ता हासिल करने से पहले अपनी राजनीतिक प्रासंगिकता को मजबूत करने की चुनौती है.

व्यंग्य

दीमक से संवाद

रवि उपाध्याय
(लेखक व्यंगकार और राजनीतिक समीक्षक हैं)

पहेलियां, कहावतें और मुहावरे भाषा के भूषण होते हैं। पहेलियां इन सब में काफ़ी रोचक होती हैं। जब हमारे हाथों में डिजटल डिवाइस नहीं होतीं थीं तो टाइम पास करने और ज्ञान बढ़ाने का माध्यम पहेलियां ही हुआ करतीं थीं। ऐसी ही एक पहेली याद आ रही है जिसमें पूछा जाता था - लाल गाय लक्कड़ खाए, पानी पिए मर जाए। तो बूझो क्या शायद आपने भी इस तरह की पहेलियां सुनी ही नहीं होंगी बल्कि उनको हल भी किया होगा.

बचपन में सुनी गईं और हल की गईं पहेली से अलग आज कल टीवी और पेपरों की यह ख़बर मेरे सामने अन बूझ पहली बनी हुई है . ख़बर में बताया गया है कि कोलकाता के नामी सुरेन्द्रनाथ बनर्जी कॉलेज के छात्र संघ के कक्ष से पुलिस ने दो सूटकेस बरामद किए हैं. इन सूटकेस से लाखों रुपए की कीमत के ऐसे करेंसी नोट के अवशेष भरे हुए थे जिनको दीमकों द्वारा खाया जा चुका है.तब से ही यह सवाल मेरे दिमाग़ में रह रह के उठ रहा है कि अभी तक तो सरकारी अफसरों,कर्मचारियों और नेता लोगों को ही नोट खोर माना जाता था अब दीमकों को भी यह शौक लग गया हाय रब्बा ,अब क्या होगा मेरे मादरे वतन का.

भला दीमकों में यह शौक आ कहाँ से गया . इस घटना पर प्रयोगवाद के वरिष्ठ कवि सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय जी की वह कविता याद आती है जिसमें वह सांप से सवाल पूछते हैं . सांप, तुम सभ्य तो हुए नहीं, नगर में बसना भी तुम्हें नहीं आया. एक बात पूछूं तब कैसे सीखा डंसना विष कहां से पाया

अज्ञेय जी की सांप वाली उक्त कविता ने मुझ में एक जिज्ञासा पैदा कर दी कि,जब अज्ञेय जी खतरनाक सांप से सवाल करे सकते हैं तो अपन यही सवाल दीमक से क्यों नहीं कर सकते कि वह अपने काम से काम क्या नही रखता. क्यों दूसरे के कामों में टांग घुसेड़ता है. आदमी के अधिकार क्षेत्र में आखिर यह अतिक्रमण करने का क्या मतलब है , अरे भाई तुम्हारा काम है लकड़ी और मिट्टी चाटने का तो भैया वही करो न. काहे को नेता और सरकारी सिस्टम में अपनी नाक या टांग घुसेड़ रहे हो. तुम को चाटना ही है तो नेताओं और नोट खाने वाले अफसरों और बाबुओं की कुर्सियों में घुन बन कर घुस जाओ. उन्हें चट करो. सिस्टम को बख्श दो.

इन्हीं सब सवालों के साथ सचमुच में हमारी मुलाकात सफ़ेद पोश चीटियों यानि दीमकों के झुंड से हो गई. हमने पूछा भाई साहब आपने कोलकाता के कॉलेज की वो ख़बर तो सुनी होगी जिसमें आपकी बहनों और भाईयों ने बड़ी जतन से शानदार सूटकेसों में रखे लाखों रुपए के करेंसी नोटों को कतरनों में बदल दिया. क्या यह अनधिकार चेष्टा नहीं है. आखिर बंद सूटकेसों में आपका प्रवेश कैसे हो गया ? इस पर एक श्वेत दीमक ने कहा में बताती हूं.जब सिस्टम आंख बंद कर लेता है तब हमारा प्रवेश होता है. तब मजबूरीवश इस तरह के ऑपरेशन को चुपके से अंजाम देना पड़ता है. जिन भाई बहनों ने वहां इस काम को अंजाम दिया है वह कोई ऐसे वैसे नहीं बल्कि उसी क्रांतिकारी के नाम पर स्थापित कॉलेज की ही उपज हैं. सूट केसों में रखा धन काला था इसलिए उसे उनके द्वारा नष्ट कर दिया गया.

टीआरपी का मायाजाल! दर्शक भी उतने ही गुनहगार

आज के दौर में मीडिया की शक्ति निर्विवाद है. सरकारों की छवि निर्माण से लेकर जनमत को प्रभावित करने तक उसकी भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो चुकी है. 2014 के लोकसभा चुनाव में नरेंद्र मोदी के उभार से लेकर अन्ना आंदोलन और उसके बाद अरविंद केजरीवाल के राजनीतिक उदय तक मीडिया की भूमिका निसंदेह महत्वपूर्ण रही है. फिल्मी कलाकार ''सुशांत सिंह राजपूत'' का मीडिया ट्रायल हो या ''ऑपरेशन सिंदूर'' जैसी संवेदनशील सैन्य एवं राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़े घटनाक्रमों की अतिरंजित कवरेज जैसे अनेकानेक विषय; पर मीडिया का प्रसारण हर बार एक शब्द गूंजता है ''टीआरपी''. आखिर ''टीआरपी'' है क्या बला? और इस ''चूहा-बिल्ली के खेल'' का असली खलनायक कौन?

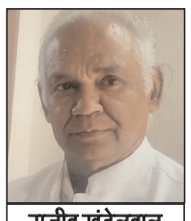

राजीव खंडेलवाल
लेखक, कर सलाहकार एवं पूर्व अध्यक्ष, बैतूल सुधार न्यास

मीडिया की ''आन बान शान'' के आकलन का एकमात्र बैरोमीटर ''टीआरपी'' है. टीआरपी मतलब (टेलीविजन रेटिंग प्वाइंट) किसी टीवी कार्यक्रम या चैनल की लोकप्रियता का इकलौता मापदंड है. यह बताता है कि ''लक्षित'' दर्शकों में से कितने प्रतिशत लोग किसी विशेष कार्यक्रम या चैनल को देख रहे हैं. सरल शब्दों में कहें तो, टीआरपी मीडिया जगत की वह ''मुद्रा'' (करेंसी) है, जिससे उसका बाजार भाव व रुतबा तय होता है. किसी चैनल की टीआरपी जितनी अधिक होती है, विज्ञापनदाताओं से उसे महंगे दर पर अधिक विज्ञापन मिलने से उतनी ही अधिक आय प्राप्त होती है. यही कारण है कि चैनलों के बीच दर्शकों का ध्यान आकर्षित करने की निरंतर गला-काट प्रतिस्पर्धा होकर यह कई बार निम्न स्तर तक चली जाती है.

टीआरपी केवल आर्थिक लाभ तक सीमित नहीं है. अधिक दर्शक संख्या चैनल की राजनीतिक दखलंदाजी और सामाजिक प्रभावशीलता भी ब?ाती है. सत्ता, कॉरपोरेट जगत और रसूखदार तबके स्वाभाविक रूप से उन मंचों के निकट रहना चाहते हैं, जिनकी पहुंच जनता के बीच व्यापक हो. मीडिया हाउस को भी सत्ता और कॉरपोरेट जगत के निकट आने का फायदा मिलता है. इसलिए वे उसके आस-पास रहने का प्रयास करते है. भारत में टीआरपी की गणना और प्रकाशन बीएआरसी (ब्रॉडकास्ट ऑडियंस रिसर्च काउंसिल) द्वारा किया जाता है. यह ब्रॉडकास्ट एडवरटाइजर्स और एजेंसियां का संयुक्त संगठन है. इसके लिए देशभर के चयनित घरों में विशेष उपकरण लगाए जाते हैं, जो यह रिकॉर्ड करते हैं कि कौन-सा चैनल कितनी देर तक देखा गया.इस आंकड़े का विश्लेषण आयु, लिंग, ग्रामीण-शहरी पृष्ठभूमि तथा सामाजिक-आर्थिक वर्गों के आधार पर ''वेटेज'' देकर किया जाता है और फिर पूरे देश के दर्शकों का अनुमान लगाया जाता है. इसी आधार पर साप्ताहिक टीआरपी भी रिपोर्ट जारी होती है. जब भी कोई चैनल किसी घटना को ''राई का पहा?'' बनाकर सनसनीखेज तरीके से प्रसारित करता है (कुछ उदाहरण ऊपर दिए गए हैं), तो तुरंत तोहमत लगती है कि यह सब ''टीआरपी का खेल'' है. मानो पत्रकारिता की सारी विकृति की जड़ यही एक शब्द है. तथापि यह आरोप पूरी तरह निराधार नहीं है. लेकिन क्या सारा ठीकरा मीडिया पर फोड़ना आधे सच को देखना नहीं? वास्तव में इसी आरोप में जनता की अंशदायी (योगदान), ''सहभागिता'' भी छुपी हुई है. टीआरपी किसी चैनल के कार्यक्रम में नहीं, बल्कि वह दर्शकों के ड्राइंग रूम में बनती है. विडंबना देखिये, जिस कंटेंट को लोग ''चटकारे लेकर'' देखते हैं. यदि दर्शक किसी कार्यक्रम को देखना ही बंद कर दें, तो उसकी टीआरपी स्वतः गिर जाएगी. बाजार का सिद्धांत है ''जो बिकता है, वही बाजार में दिखाई देता है''. यदि सनसनी, विवाद, भावनात्मक उत्तेजना और उत्तेजक बहसों वाले कार्यक्रम लगातार ऊंची टीआरपी प्राप्त करते हैं, तो इसका अर्थ यही है कि दर्शकों का एक ब?ा वर्ग उन्हें देख भी रहा है. ऐसे में मीडिया की आलोचना करते समय दर्शकों की भूमिका को पूरी तरह नजरअंदाज करना वास्तविकता से आंख मूंदना होगा. क्या इसके लिए जनता भी दोषी नहीं है?? पत्रकारिता केवल व्यवसाय नहीं, ''धर्म'' भी है. इसका उद्देश्य केवल दर्शकों की पसंद का पीछा करना नही, बल्कि समाज को तथ्यपरक, संतुलित और विश्वसनीय सूचना उपलब्ध कराने का सार्वजनिक दायित्व भी है. दर्शकों की कमजोरी को ''कैश'' करने लगे तो प्रेस का मूल उद्देश्य ही धराशायी हो जाएगा.

टीआरपी की अंधी दौड़ के चलते यदि समाचार, मनोरंजन और फूह? मजाक, व्यंग की रेखा धुंधली हो जाए, तथ्यों की जगह उत्तेजना ले ले और ''बहस'' की जगह ''शोर'' हावी हो जाए, एक कार्यक्रम का नाम ही ''हल्ला बोल'' ही है, दंगल, महाभारत, आर-पार है तो पत्रकारिता की साख ''मिट्टी में मिलना'' तय है.शायद यही कारण है कि पिछले कुछ वर्षों में बड़ी संख्या में दर्शक पारंपरिक टीवी मीडिया से हटकर डिजिटल और सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म की ओर आकर्षित हुए हैं.

भयमुक्त समाज ही विकसित प्रदेश की पहचान है

लक्ष्मण सिंह
पूर्व सांसद

अविभाजित मध्य प्रदेश में और आज के मध्य प्रदेश में अपराधों की तुलना करें तो नक्सलवाद को छोड़कर अन्य अपराधों की संख्या और आंकड़े हमें बड़े हुए मिलते हैं, जबकि मध्य प्रदेश राज्य का क्षेत्रफल कम हुआ है और पुलिस बल की संख्या और थानों की संख्या बड़ी है. महिला थाने भी ज्यादा खोले गए हैं. पुलिस बल का आधुनिक करण भी हुआ है, तकनीक भी बहुत विकसित हुई है. जिसके कारण डकैतों का लगभग सफाया हो गया है. कांग्रेस के शासनकाल में जहां, अविभाजित मध्य प्रदेश का समय सर्वाधिक था, नक्सलवाद की समस्या को बातचीत के माध्यम से सुलझाने के प्रयास, गांधीवाद के सिद्धांत पर चलकर अधिक हुए, परंतु दुर्भाग्य वर्ष आशाजनक परिणाम सामने नहीं आए और नक्सलवाद बढ़ता गया. नक्सलवाद बढ़ाने का एक कारण और भी रहा है की कई आदिवासियों को जो निर्दोष थे, पुलिस ने फर्जी एनकाउंटर कर मार डाला. यह जानकारी मुझे मिली जब मैं स्वयं स्वर्गीय पूर्व मुख्यमंत्री मोतीलाल जी वोरा के लोकसभा प्रचार में राजनांदगांव गया था, जो एक नक्सल प्रभावित जिला है. शासन इन घटनाओं पर चूंकि मौन रहा कॉम अपराध और नक्सलवाद इसीलिए बढ़ता गया.

1. पुलिस प्रणाली में राजनीतिक हस्तक्षेप कोई नई बात नहीं है. मेरे राजनीतिक जीवन में मैंने कभी भी किसी पुलिस वाले के स्थानांतर की सिफारिश नहीं की जबकि पुलिस विभाग के स्थानांतर की बहुत सारे नेता सिफारिश करते रहते थे और मैं अकेला ही नहीं मेरे जैसे बहुत से ऐसे भी नेता रहे हैं जिन्होंने कभी पुलिस विभाग में स्थानांतर की सिफारिश नहीं की. क्योंकि अगर हम पुलिस के काम में हस्तक्षेप करेंगे तो फिर पुलिस अपना काम नहीं कर पाएगी इसीलिए जो नेता केवल पुलिस के स्थानांतर की बात करते हैं उन पर ज्यादा ध्यान नहीं देना चाहिए और अगर बहुत ही आवश्यक हो तो बोलना चाहिए परंतु ऐसे अधिकांश नेता मैंने देखे हैं और आज भी है जो अधिकतर पुलिस विभाग में अनावश्यक करते हैं और पुलिस की कर प्रणाली को प्रभावित करते हैं यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है ऐसा करने से पुलिस बल का मनोबल टूटता है और वह इन नेताओं के इशारे पर कार्य करने को बाधित हो जाता है और यही से माफिया को बल मिलता है और अपराधों में अप्रत्याशित वृद्धि होती है.
2. एक प्रथा जो अत्यंत प्रचलित हो चुकी है, वह है चंदा वसूली. सत्ता दल के लोग इसका भरपूर दुरुपयोग शासकीय तंत्र का करते हैं. कोई राजनीतिक रैली हो कोई धार्मिक आयोजन हो या नेताजी के घर में विवाह या अन्य कार्यक्रम हो चंदा वसूली एक प्रथा बन चुकी है. कांग्रेस शासन में भी होता था, परंतु अब तो सारी सीमाएं पार हो चुकी हैं. इन्हें रोकना होगा और यह कार्य जनता ही कर सकती है, शांतिपूर्ण आंदोलन के माध्यम से.
3. सबसे चौंकाने वाले तथ्य जो है वह यह है की कई बार पुलिस द्वारा स्वयं अपराधियों को अपराध करने हेतु प्रोत्साहित किया जाता है. लोग इस बात पर विश्वास नहीं करेंगे, परंतु यह कटु सत्य है, और इसके पीछे राजनीतिक दल के नेता ही अधिकतर होते हैं. अभी एक हफ्ते पहले कुंभराज जिला गुना में एक रंगदारी अवैध वसूली के प्रकरण में मारपीट हुई और दो नौजवान घायल हुए. में स्वयं कुंभराज पहुंचा था, जनता ने पुलिस थाने को घेर रखा था और रंगदारी हफ्ता वसूली के विरुद्ध नारे लग रहा है लग रहे थे. अपराधियों को पकड़ा था, स्वयं उन्होंने सोशल मीडिया द्वारा बताया किस प्रकार पुलिस उन पर दबाव बनाकर ड्रग्स रंगदारी और वसूली करवाती है. वो बयान देने को भी तैयार थे, परंतु स्वाभाविक है पुलिस उनके बयान क्यों लिखेगी? शासन में बैठे लोगों को यह बात संज्ञान में लेना चाहिए तभी हम भयमुक्त प्रशासन दे सकते हैं .
4. महिलाओं पर अत्याचार की संख्या भी बहुत बड़ी है की महिलाएं निडर होकर रिपोर्ट लिखवाती हैं और शिक्षित भी ज्यादा है. और पहले अशिक्षित थी इसलिए रिपोर्ट नहीं लिखवाती थी यह भी कारण हो सकता है. इसलिए यह आवश्यक है, कि महिला पुलिस बल में भर्ती बढ़ाई जाए और महिला थानों की संख्या में वृद्धि की जाए समाज में दहेज प्रथा भी एक मुख्य कारण है, महिलाओं पर अत्याचार बढ़ाने का. आजकल तो जो दहेज दिया जाता हैं, उसका वीडियो भी जनप्रतिनिधियों और अधिकारियों के सामने बनता है. और यह लोग मौन खड़े होकर उसे ही राशि को निहारत रहते हैं. यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है, शर्म आनी चाहिए ऐसे नेताओं और अधिकारियों को जो यह सब देखकर भी चुप रहते हैं और महिला उत्पीड़न के विरुद्ध कार्रवाई नहीं करते अपराध कम करने के लिए शासन को शस्त्र लाइसेंस देने की प्रक्रिया को भी सरल बनाना होगा. अभी वक्त यह प्रक्रिया बहुत जटिल है, कोई भी व्यक्ति लाइसेंस शस्त्र अपनी सुरक्षा के लिए रखता है, अपराध तो बिना लाइसेंस के हथियारों से होते हैं.

राहुल गांधी का पुनर्मूल्यांकन

क्या भारतीय राजनीति ने उनके साथ न्याय किया है?

भूपेंद्र गुप्ता

समकालीन भारतीय राजनीति में शायद ही कोई ऐसा नेता हो, जिसे राहुल गांधी जितनी आलोचना, समीक्षा और टिप्पणी का सामना करना पड़ा हो. पिछले डेढ़ दशक में उन्हें अनुभवहीन, अनिच्छुक और वंशवादी राजनीति का प्रतीक तक कहा गया. इतिहासकार रामचंद्र गुहा ने कभी उन्हें 'सद्इच्छाओं वाला शौकिया राजनीतिज्ञ' बताया था. प्रश्न यह है कि क्या आज भी यह मूल्यांकन उतना ही प्रासंगिक है, या समय ने इस निष्कर्ष को चुनौती दी है?

राहुल गांधी के आलोचक अक्सर उनके पारिवारिक राजनीतिक विरासत को ही उनके सार्वजनिक जीवन का सबसे महत्वपूर्ण तथ्य मानते हैं. इसमें कोई संदेह नहीं कि वे भारत के सबसे चर्चित राजनीतिक परिवार से आते हैं. लेकिन क्या किसी राजनीतिक नेता का मूल्यांकन उसके उपनाम से होना चाहिए या उसके सार्वजनिक जीवन और कार्यों से?

यदि केवल वंशानुगत पृष्ठभूमि ही राजनीतिक वैधता का आधार है, तो भारतीय राजनीति के अनेक नेताओं की स्थिति भी समान कसौटी पर परखी जानी चाहिए. लगभग सभी प्रमुख दलों में ऐसे नेता मौजूद हैं, जिनकी राजनीतिक पहचान की शुरुआत पारिवारिक संबंधों के कारण हुई. फिर भी उनके राजनीतिक कौशल, जनसमर्थन और चुनावी प्रदर्शन को भी महत्व दिया जाता है. राहुल गांधी को प्रायः यह संतुलित दृष्टि नहीं मिलती.हाल के वर्षों में राहुल गांधी ने राजनीति की एक अलग शैली विकसित करने का प्रयास किया है. भारत जोड़ो यात्रा और भारत जोड़ो न्याय यात्रा केवल राजनीतिक अभियान नहीं थे, बल्कि नागरिकों से सीधे संवाद स्थापित करने के व्यापक प्रयास थे. हजारों किलोमीटर पैदल चलना, विभिन्न सामाजिक समूहों के बीच लगातार संवाद करना और आम लोगों की बात सुनना उस छवि से मेल नहीं खाता, जिसमें उन्हें राजनीति से उदासीन बताया जाता है. यह भी उल्लेखनीय है कि राहुल गांधी अत्यंत प्रतिकूल राजनीतिक परिस्थितियों में भी प्रासंगिक बने रहे हैं. भारतीय राजनीति में अनेक उदाहरण हैं, जहाँ बड़ी चुनावी पराजय के बाद नेता हाशिए पर चले गए. इसके विपरीत राहुल गांधी राष्ट्रीय विपक्ष के प्रमुख चेहरों में बने रहे, बार-बार चुनाव जीतकर संसद पहुंचे और सार्वजनिक विमर्श को प्रभावित करते रहे. किसी भी लोकतंत्र में यह अपने आप में एक महत्वपूर्ण राजनीतिक उपलब्धि है.

यहीं पर रामचंद्र गुहा जैसे आकलनों के पुनर्विचार की आवश्यकता दिखाई देती है. यदि राजनीतिक सफलता का अर्थ केवल सत्ता प्राप्ति है, तो लोकतंत्र में विपक्ष की भूमिका का महत्व कम हो जाता है. लेकिन यदि सफलता का मूल्यांकन जनसंपर्क, वैचारिक हस्तक्षेप, संगठनात्मक प्रभाव और जनस्वीकृति से भी किया जाए, तो राहुल गांधी का मूल्यांकन कहीं अधिक संतुलित होना चाहिए.

(लेखक कांग्रेस विचार विभाग के अध्यक्ष हैं.)